योगकेन्द्र, सान्टियागो,
चिली
अगस्त १०, २००३

सन्देश संख्या ५९

प्रत्यभिज्ञाहृदयम्

प्रति : भिन्न
अभिज्ञा : ज्ञान या अनुभव
हृदयम् : हृदय

मस्तिष्क अनुभव की संरचना और ज्ञान अर्थात् स्मृति एवं बुद्धि यानी ''चित्त'' अर्थात् विखण्डित चेतना का ढाँचा है।

ज्ञान (अवधारणाओं और निष्कष) का भिन्न रूप है जानना (प्रत्यक्षबोध)। इस प्रत्यक्षबोध का उद्‌गम और आधार हृदय में कदाचित् ''चिति''–पूर्ण चैतन्य का एक संयोजन है। हृदय में ब्रह्माण्डीय चैतन्य का अंगुष्ठमात्र संयोजन (कठोपनिषद) ही 'सत्' है। ''चित्त'' (मन) मान्य है, किन्तु सत् नहीं। ''चिति'' सत् है और मन मात्र कल्पित है। जिस प्रकार एक विद्युत उपकरण विद्युत के मुख्य उद्‌गम से संयुक्त हुए बगैर मात्र अपने यन्त्र–समूह के कारण ही कार्य नहीं कर सकता है, उसी प्रकार मानव प्राणी में गुण चिति के साथ संयुक्त हुए बिना संचालित नहीं हो सकते हैं। यह संयोजन ही आत्मा या हृदय है।

पतञ्जलि योग सूत्र ''चिति–शक्ति–इति'' के साथ समाप्त होता है। प्रत्यभिज्ञाहृदयम् का आरम्भ ''चिति'' के साथ होता है और इसलिए इसे ''शिव'' के अत्यधिक भव्य एवं सूक्ष्म आयाम में योग सूत्रों की निरन्तरता के रूप में माना जा सकता है। ''शिव'' – ''चित्त'' (खण्ड चैतन्य जो कि अनुभव–अहंकार का ढाँचा है) का पूर्ण विलय तथा ''चिति'' (चैतन्य अर्थात् स्मृति और बुद्धि जो कि खण्ड चैतन्य है, से अदूषित विशुद्ध तथा अखण्ड ब्रह्माण्डीय चैतन्य) का उदय है। यही है ''चिदानन्द रूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्''। इस पुस्तक के सूत्रों में योगसूत्र अब शिवत्व अर्थात् वेदान्त, जो मानने की दुनिया का अन्त और जानने की दुनिया का आरम्भ है, की ओर ले जाता है।

''शिव'' शब्द की व्युत्पत्ति ''शि'' तथा ''श्वि'' के मूल से हुई है। ''शि'' का अर्थ है– पड़े रहना अर्थात् विराजमान रहना। ''श्वि'' का अर्थ है– अलग करना, काट देना। ''शिव'' ''पूर्ण चैतन्य'' – परम प्रज्ञा अर्थात् अखण्ड चैतन्य है। प्रत्येक वस्तु इस परम अनुग्रह, आशीष और परम सौन्दर्य में विराजमान है। यह ''शिव'' या ''चिति''–चैतन्य ही वह मौलिक और आधारभूत सत् है जो अपने आभास और अनुग्रह के माध्यम से बुद्धि या मन (चित्तवृत्ति) की शरारतों तथा उन्मत्तता के कूड़े–कचरे से रक्षा करता है।

कोई अन्य ''मुक्तिदाता'' नहीं है। संगठित धर्मों में ''मुक्तिदाताओं'' के बारे में प्रचार मन की कपटपूर्ण चाल से उत्पन्न होता है जो सदैव परावलम्बन, सुरक्षा और सान्त्वना की अपेक्षा रखता है। धर्म के नाम पर समस्त ठगी जो धर्म, ईश्वर, उसका एक मात्र पुत्र, मुक्तिदाता, पैगम्बर, पोप, परमहंस तथा अवतार के नाम पर मानवता को विभाजित करती है, और कुछ भी नहीं बल्कि मन–विभेदकारी चित्तवृत्ति की कपटपूर्ण अवधारणायें, चालें और निष्कष मात्र हैं।

शिव मन के समस्त पापों को भी काट देता है। मन ही पाप है और पाप ही मन है। जीवन–चैतन्य, चिति कोई पाप नहीं जानती है। मन के गलाघोंटू पकड़ से मुक्ति ही सम्पूर्ण पापों से मुक्ति है। यही कारण है कि ऐसा कहा गया हैः ''श्यति पापम् इति शिवः'' जिसका अर्थ हैः केवल शिवावस्था अर्थात् चित्तवृत्ति का विलय ही समस्त पापों को काट देता है। शिव ही परम सत् के साथ–साथ परम शुभ हैं। चित्तवृत्ति का विलय अर्थात् सम्पूर्ण लालसाओं, भय और निर्भरता की समाप्ति ही परम प्रबोध है। हमारे जीवन के प्रत्येक स्तर पर द्वैत का निराकरण हो जाना ही विभेदकारी चित्तवृत्ति (मन–अहंकार) से पूर्ण एवं सहज (शर्तविहीन) मुक्ति है।

सूत्र १ : चितिः स्वतन्त्रा विश्वसिद्धि हेतुः ।

ब्रह्माण्डीय चैतन्य स्वतन्त्र एवं पूर्ण है। यह सार्वभौम उत्कष अर्थात् वैयक्तिक अद्वितीयता के बावजूद भी उसमें सार्वभौमिकता के उदय के लिए विद्यमान है।

सूत्र २ : स्वेच्छया स्वभित्तौ विश्वमुन्मीलयति ।

यह (ब्रह्माण्डीय चैतन्य) स्वाभाविक रूप से ब्रह्माण्ड को अपने आधार पर प्रकट करता है।

सूत्र ३ : तन्नाना अनुरूपग्राह्यग्राहकभेदात् ।

विषयी और विषय, दष्टा और दृश्य तथा ध्याता और ध्यान के मध्य द्विभाजन के कारण अनेक प्रकार के लौकिक प्रपञ्च का आभास होता है।

सूत्र ४ : चितिसंकोचात्मा चेतनोऽपि संकुचित विश्वमयः ।

भिन्न–भिन्न शरीर जो कि ब्रह्माण्डीय चैतन्य (चिति) के लघु आयाम के साथ संयुक्त हैं, लघु ब्रह्माण्ड के रूप में माना जा सकता है। इस प्रकार शरीरभूत चेतना परिमाण में यद्यपि अत्यधिक न्यून हो जाने के बावजूद भी गुणात्मक दृष्टि से ब्रह्माण्डीय चैतन्य के समरूप है। (यह शरीरभूत चेतना = चित्त+ना = ''निर्मनावस्था'' जो कि बुद्धि के परे है, उच्च कम्प्यूटर मस्तिष्क जो स्मृति–बुद्धि–मन–अहंकार के प्रपंच का यन्त्र है उससे उत्पन्न अनुभव के ढाँचे से पृथक, शुद्ध अस्तित्व है। जब बुद्धि या मन पूर्व धारणाओं तथा पूर्व निश्चित निष्कर्षों से ग्रस्त नहीं होते हैं तब शरीर में प्रत्यक्षबोध की उपलब्धि होती है। जब मन का अभाव हो जाता है तब जीवन सजीव होता है।)

सूत्र ५ : चितिरेव चेतनपदादवरूढा चेत्यसंकोचिनी चित्तम् ।

विशुद्ध ब्रह्माण्डीय चैतन्य, चेतना के विषयों के साथ मनस्तात्विक संलिप्तता के कारण, शरीर के अंदर अशुद्ध एवं संकुचित चित्तवृत्ति बन जाता है (द्वैत, कामना–वासना तथा निर्भरता यही सब चित्तवृत्ति की अशुद्धता है)।

सूत्र ६ : तन्मयो मायाप्रमाता ।

भासमान अहंभाव (माया) इसी संकुचित चित्तवृत्ति से बना हुआ है जिसे हम चित्त कहते हैं। (अहंभाव और मन समरूप हैं। जब हम मेरा मन कहते हैं तब वास्तव में ''मैं'' ही ''मन'' हूँ तथा ''मन'' ही ''मैं'' है। यह मिथ्या द्वैत ही हमारे दुःख और दुःखभोग का मूल कारण है)।

सूत्र ७ : स चैको द्विरूपस्त्रिमयश्चतुरात्मा सप्तपञ्चकस्वभावः ।

यद्यपि ब्रह्माण्डीय चैतन्य एक है, यह दो, तीन एवं चार तहों तथा सप्तपंचभुजीय हो सकता है। प्रत्यक्षबोध एक तहवाला है जहाँ पर उद्दीपन और अनुक्रिया का एकात्मक लय बन जाता है। पहचान दो तहवाला है जहाँ पर उद्दीपन और अनुक्रिया के मध्य द्विभाजन उत्पन्न हो जाता है (ग्राह्य–ग्राहक भेद)।

बुद्धि तीन तहवाली है जहाँ पर पहचान का भी श्रेणीकरण होने लगता है। अनुभव चार तहवाला है जहाँ पर श्रेणीकरणों का भी वर्गीकरण होने लगता है। इस वर्गीकरण की शुरूआत मनस्तात्विक विकल्पों के माध्यम से होने लगती है और ये विकल्प लालन–पालन तथा उसमें संलिप्तता से उत्पन्न होते हैं जिसके दूसरे नाम सांस्कृतिक निवेश एवम् अनुबन्धित प्रतिक्रियायें हैं। ये सब कारण हैं प्रीतिकर या अप्रीतिकर, लाभदायक या अलाभदायक, दुःखद या सुखद इत्यादि विकल्पों की उत्पत्ति के जो कि अनुभव के रूप में जाने जाते हैं।

काल के सात आयाम :

१.	कालानुक्रमिक काल	(विज्ञान काल)
२.	जैविक काल	(प्रलय काल)
३.	मनस्तात्विक काल	(मन) (स–काल)
४.	काल से मुक्ति	(मन–त्र) – काल से परे
५.	मुक्ति की भव्य एवं सूक्ष्म अनुभूति	(लिङ्ग मन्त्र) (महेश्वर)
६.	अनुभवरहित अवस्था	(अलिङ्ग–अरूप) आनन्दमय अस्तित्व मात्र (मन्त्र–महेश्वर)
७.	शून्यता–सत्–शाश्वत अनुग्रह	(शिव–प्रमाता) और आशीर्वाद

ये सभी संवेदी प्रत्यक्षबोध के पाँच आयामों (दृष्टि, घ्राण, स्पर्श, श्रवण, स्वाद) से संयुक्त हैं। इसलिए सप्तपञ्चभुजीय हैं का उल्लेख किया गया है।

सूत्र ८ : तद्भूमिकाः सर्वदर्शनस्थितयः ।

समझदारी की गहन प्राञ्जलता का आधार और कुछ भी नहीं बल्कि ब्रह्माण्डीय चैतन्य की विभिन्न भूमिकायें मात्र हैं।

सूत्र ९ : चिद्वत्तच्छक्तिसंकोचात् मलावृतः संसारी ।

एक विशेष शरीर में समझदारी के ऊर्जा की सीमाबद्धता के कारण व्यक्ति गतानुगतिक मानसिकता से प्रदूषित हो जाता है (प्रदूषण = ललक तथा उससे उत्पन्न गड़बड़ी) ।

सूत्र १० : तथापि तद्वत् पञ्चकृत्यानि करोति ।

तब भी, ब्रह्माण्डीय चैतन्य की भाँति एक व्यक्ति द्वारा पाँच मौलिक कार्य किये जाते हैं।

ब्रह्माण्डीय चैतन्य (चिति) के पाँच मौलिक कार्य :–

१. सृष्टि : सामान्य अनुवाद या अर्थ है ''सृजन''। यह सृकिर्ता और सृष्टि के मध्य द्वैत या द्विभाजन की ओर संकेत करता है। द्वैत दिव्यता की अस्वीकृति है क्योंकि यह इच्छा–मन और इसकी शरारत की शुरूआत है जो कि भ्रम और दुःख का मूल है। सृ की सही समझदारी है उद्भासित होना, स्वयंभू होना अर्थात् ब्रह्माण्ड को स्वयं से ही प्रकट करना।

२. स्थिति : ब्रह्माण्ड का प्रतिपालन।

३. संहार : प्रत्याहार या पुनरात्मसात्करण (पुनः सामान्य अर्थ है विनाश जो कि सही नहीं है)। दिव्यता प्रेम है। यह विनाश नहीं करती है। यह मात्र आत्मसात् करती है ताकि ब्रह्माण्ड पुनः प्रकट हो सके।

४. विलय : इसके यथार्थ सत् का संगोपन। यह न तो ज्ञात है न अज्ञात। यह अज्ञेय है। सत् अस्तित्व है, न कि एक अनुभव।

५. अनुग्रह : महान् कृपा, सर्वोच्च मंगलमयता, परमशुभ।

चिति, शिव या ब्रह्माण्डीय चैतन्य स्वयं से ब्रह्माण्ड को प्रकट करता है, इसे अस्तित्व प्रदान करता है तथा अन्ततः पुनः प्रकट होने देने के लिए अपने में आत्मसात् कर लेता है। ब्रह्माण्डीय चैतन्य और इसकी ऊर्जा प्रत्येक वस्तु को घेर लेती है। इस चक्र को ब्रह्माण्डीय प्रक्रिया का एक ''कल्प'' कहा जाता है तथा इसकी पुनरावृत्ति शाश्वतत्व से शाश्वतत्व तक होती रहती है। अनुग्रह ब्रह्माण्डीय चैतन्य (चिति) की असीम कृपा है जिसके द्वारा यह मनुष्य को पूर्ण एवं सहज मुक्ति प्रदान करता है। यही है सब अन्तों का अन्त तथा सब शुरूआतों की शुरूआत अर्थात् मानव शरीर में परम समाधि। अनुग्रह शिव–चिति अर्थात् ब्रह्माण्डीय चैतन्य का भरपूर प्रेम एवं करुणा है। यह सर्वत्र व्याप्त है और यदि कोई निष्कपट (अज्ञानी नहीं) अर्थात् अत्यधिक ''भोला'' है, इसकी झलक को प्राप्त करता है। ख्ग्स भूमण्डल पर एक स्थान जिसे वाराणसी कहते हैं, में यह अनुग्रह कदाचित् विशेष रूप से तीव्र है। (वाराणसी ''भोलानाथ'' (शिव) का प्रिय निवास है जहाँ पर पवित्र नदी गंगा अर्द्धचन्द्राकार रूप लिए

हुए हैं।,

अब इस पर ध्यान दें :

एक व्यक्ति भी पाँच मौलिक कार्य करता है :–

१. प्रजनन

२. जीवन

३. मरण

४. रहस्यमय अस्तित्व जानने के लिए प्रचण्ड आवेग (अहैतुक प्रेरणा)।

कौतूहल दिव्य के लिए गहन आवेग की गतानुगतिक अभिव्यक्ति है। इस प्रकार मानव प्राणी का कौतूहल दिव्य के लिए एक आवेग है जो उसके वास्तविक स्वरूप का संगोपन है।

५. प्रेम और करुणा।

(यह सूत्र मानव और ब्रह्माण्ड के मध्य सामञ्जस्य पर एक गहन उद्‌गार है।)

सूत्र ११ : आभासनरक्तिविमर्शनबीजावस्थापन विलापनतस्तानि ।

चिति अर्थात् ब्रह्माण्डीय चैतन्य यह सब भी हो सकता है :–

प्रकटीकरण, रसास्वादन, अनुग्रह, बीज (समझदारी का) अवस्थापन, अन्तर्लयन (संचय नहीं)।

(यह सब विद्यमानता का प्रवाह है, किसी प्रकार का संचय या संग्रह नहीं। संचय अतीत, अनुभवों का साँचा, उधारी ज्ञान का ढाँचा, विभेदकारी चित्तवृत्ति, मन, अहंकार तथा मानवमात्र की सम्पूर्ण त्रासदी एवं विपत्ति है।)

सूत्र १२ : तदपरिज्ञाने स्वशक्तिभिर्व्यामोहितता संसारित्वम् ।

ब्रह्माण्डीय चैतन्य (जो कि पाँच पर्यायी प्रकरण का वास्तविक रचयिता है) की झलक न मिलने से व्यक्ति का गतानुगतिक भ्रम में अधःपतन हो जाता है जिसके कारण उसे प्रतीत होता है कि अहंकार ही कार्य करता है।

(अहंकार ''संकल्प–शक्ति'' की बात करता है किन्तु संकल्प ही अहंकार है। ''संकल्परहित शक्ति'' अर्थात् दिव्य ऊर्जा के कारण सब कुछ घटित
होता है।)

सूत्र १३ : तत्परिज्ञाने चित्तमेवान्तर्मुखीभावेन चेतनपदाध्यारोहाच्चितिः।

ब्रह्माण्डीय चैतन्य (अर्थात् पाँच पर्यायी कार्य के वास्तविक रचयिता) के पूर्ण प्रत्यक्षबोध के माध्यम से विभेदकारी चित्तवृत्ति अर्थात् मन ''निर्मन'' (चित्त+ना अर्थात् चेतना) की स्थिति पर आरोहण करता है। तदनन्तर एक अन्तर्मुखी अनुग्रह और कृपा के द्वारा चेतना का चिति–सार्वभौम चैतन्य में विस्ङ्गोट हो जाता है अर्थात् एक अनिर्वचनीय रूपान्तरण घटित
होता है।

सूत्र १४ : चितिवह्निरवरोहपदेच्छन्नोऽपि मात्रया मेयेन्धनं प्लुष्यति ।

जब ब्रह्माण्डीय चैतन्य (चिति) का दहन–दान अर्थात् समझदारी की ऊर्जा का चित्तवृत्ति में अवतरण होता है, यह अनुबन्धन के ईंधन को आंशिक रूप से भस्म कर देता है (मेयेन्धनम्) तथापि आच्छादित (खण्ड चैतन्य के धूम्र द्वारा) रह जाता है।

सूत्र १५ : बललाभे विश्वमात्मसात्करोति ।

जब व्यक्ति चिति की शक्ति (अग्नि) को प्राप्त कर लेता है तब वह सांसारिकता को आत्मसात् कर लेता है अर्थात् चित्तवृत्ति के चक्रव्यूह से बाहर आकर अपने को जीवन की अखण्डता में उन्मुक्त कर लेता है।

सूत्र १६ : चिदानन्द लाभे देहादिषु चेत्यमानेष्वपि चिदैकात्म्य प्रतिपत्ति दार्यं जीवन्मुक्तिः ।

जीवन मुक्ति की अवस्था तभी संभव है जब ब्रह्माण्डीय चैतन्य (चिति) की महान् कृपा उपलब्ध हो जाती है। इस महान् कृपा के माध्यम से ही शरीर के अनुभव–ढाँचा के कार्यरत रहने के बावजूद भी विभेदकारी चित्तवृत्ति और पूर्ण चैतन्य अर्थात् मन और जीवन के मध्य एकात्मक लय बना रहता है।

(दैनन्दिन जीवन में ज्ञात के सतत उपयोग के बावजूद भी यही है ''ज्ञात से मुक्ति'' की अवस्था)।

सूत्र १७ : मध्यविकासाच्चिदानन्दलाभः ।

मध्य (हृदय) के पुष्पित होने के पश्चात् ब्रह्माण्डीय चैतन्य (चिति) का परमानन्द खिल उठता है।

सूत्र १८ : विकल्पक्षय–शक्तिसंकोच विकास–वाहच्छेदाद्यन्तकोटि–निभाल नादय इहोपायाः ।

चिति–शक्ति का परमानन्द निम्नांकित का परिणाम हैः–

१. विकल्पों, वर्गीकरणों, विरोधों, विभाजनों, द्वैत एवं प्रतिरोध की अवज्ञा।

२. ऊर्जा के परिसंचरण में संकुचन और प्रसारण।

३. प्रश्वास द्वारा श्वास का समीकरण (अन्तर्मुखी श्वास प्राणायाम)।

(गीता में – प्राणापानौ गती रूद्‌ध्वा या
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ) ।

(यहाँ वाहच्छेदात्– वाह या प्रवाह प्राण–अपान वायु है। छेदात्–छेदन अर्थात् समीकरण है) ।

(पतञ्जलि में – चित्तवृत्तिनिरोध–अर्थात् विचारों और गुणों के संचरण में असततता)।

४. (दो) अन्त–बिन्दुओं (अन्त–कोटि) के मध्य ध्यान का अभ्यास (निभालनादय) (बारह अंगुल दूरी से अलग–सम्बन्धित पुस्तक जिससे यह उद्धृत है, विज्ञान भैरव कहते हैं जिसके ५१वें छन्द में ''द्वादशान्त'' का उल्लेख है) । यही है मानसिक प्रणायाम।

सूत्र १६ : समाधिसंस्कारवतिव्युत्थाने भूयोभूयश्चिदैक्यामर्शान्नित्योदित समाधिलाभः ।

चिति और चित्त (चैतन्य और बुद्धि) में एकात्मक लय के माध्यम से निर्बीज समाधि प्राप्त होती है। यही है अनुबन्धित प्रतिक्रियाओं और उससे मुक्ति के पुनरावृत्त क्रमों के अवलोकन का परिणाम (इसे पतञ्जलि योगसूत्र में क्रम–मुद्रा कहा गया है)।

सूत्र २० : तदा प्रकाशानन्द सार महामन्त्र वीर्यात्मक पूर्णाहन्तावेशात् सदासर्व सर्ग संहारकारि निज संविद्देवता चक्रेश्वरता प्राप्ति र्भवतीति शिवम् ।

शिवत्व की अवस्था ही चिति–विशुद्ध चैतन्य या ब्रह्माण्डीय चैतन्य का परमानन्द है। यह शिवस्वरूप ही प्रकटन, परिपालन और पुनर्लयन है। यह सम्पूर्ण दिव्यताओं की दिव्यता है। शिव सबसे गहन पवित्र ध्वनियों (मन्त्र) की अखण्ड ऊर्जा हैं (मन्त्र का अभिप्राय है मन से त्राण)। शिव प्रकाश और आनन्द के सार–तत्व हैं। शिवत्व सीमित अहंभाव की समाप्ति है। यह नील गगन का विस्मय और पूर्णता है तथा उसका सौन्दर्य एवम् आशीर्वाद भी। यह सब क्रम–मुद्रा की प्राप्ति का परिणाम है।

नोट :– उपर्युक्त सूत्रों को समझना आसान नहीं है। ऐसी स्थिति में यह सुझाव है कि भ्रान्तिकारक व्याख्याओं अथवा अनुबन्धित मन के काल्पनिक निष्कर्षों में न ङ्गँसें। इसके बजाय प्रयत्न शैथिल्य में निम्नलिखित स्तुतिगान करें। यह अनुबन्धनों से मुक्ति दिलाता है और इस प्रकार समझदारी की ऊर्जा का उषाकाल हो सकता है।

(१)

जय शिवशंकर
बम बम हर हर (दो बार)
बम बम हर हर
बम बम हर हर (दो बार)
हर हर हर हर
बम बम हर हर (दो बार)
और पुनरावृत्ति करें।

(२)

शिव शिव शिव शम्भो
शिव शिव शिव शम्भो (दो बार)
महादेव शम्भो
महादेव शम्भो (दो बार)
और पुनरावृत्ति करें।

(३)

नमः शिवाय
शिवाय नमः
और पुनरावृत्ति करें और पुनरावृत्ति करें।

(४)

हर हर महादेव शम्भो
काशी विश्वनाथ गंगे

(५)

काशी रामनाथ गंगे
काशी रामनाथ गंगे (दो बार)
काशी भोलेनाथ गंगे
काशी भोलेनाथ गंगे (दो बार)
जय जय महादेव शम्भो
काशी अन्नपूर्णा गंगे (दो बार)
और पुनरावृत्ति करें।
जय बाबा भोलेनाथ
काशीजी की
(काशी वाराणसी का प्राचीन नाम है।)